UGC APPROVED JOURNAL - 47746
© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 03 , Issue : 10 | October – December 2017

मौर्य प्रशासन पर एक विवेचना

[1]Vandna Kumari, [2]Dr. Firoz Alam
[1]Research Scholar, Department of A.I.& A.S. M.U., Bodh Gaya
[2]Lecturer of A.I.& A.S. , Alam Iqbal College , Bihar Sharif, M.U., Bodh Gaya

सार

मौर्य शासकों ने देवानामपिय्य की उपाधि लेकर मध्यस्थों की भूमिका कम करने की कोशिश की। धर्मशास्त्र के अनुसार राजा केवल धर्म का रक्षक होता था, प्रतिपादक नहीं। अर्थशास्त्र में राजत्व की नई अवधारणा दी गई है। अर्थशास्त्र के अनुसार राजपद व्यक्ति, चरित्र और मानवीय व्यवहार से ऊपर होता है। इसी क्रम में चक्रवर्ती राजा की अवधारणा भी लोकप्रिय होने लगी। अर्थशास्त्र में पहली बार चक्रवर्ती शब्द का स्पष्ट प्रयोग हुआ है। राज्य की सप्तांग विचारधारा भी लोकप्रिय होने लगी। अर्थात् राज्य के सात अंग हैं- राजा, मंत्री, मित्र, कर या कोष, सेना, दुर्ग, भूमि या देश। अर्थशास्त्र में इसमें आठवें अंग के रूप में शत्रु को भी जोड़ा है। कौटिल्य के अनुसार इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण- राजा है। दूसरी तरफ आचार्य भारद्वाज मंत्री को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। आचार्य विशालाक्ष देश या भूमि को अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं। पर पराशर दुर्ग या कोष (कर) को अधिक मानते हैं।

मुख्य शब्द : मौर्य, शासक, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, प्रशासनिक, व्यवस्था इत्यादि।

प्रस्तावना

चन्द्रगुप्त मौर्य ने एक विशाल एवं शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना की। मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त जहाँ एक ओर अपने पराक्रम के लिए इतिहास में प्रसिद्ध हैं, दूसरी ओर सुव्यवस्थित तथा सुसंगठित शासन-प्रणाली को जन्म देने के परिणामस्वरूप भारतीय इतिहास में विशेष महत्त्व रखता है। मौर्य प्रशासनिक व्यवस्था की स्थापना में चन्द्रगुप्त के सलाहकार मंत्री चाणक्य का विशेष योगदान रहा। चाणक्य के अर्थशास्त्र से हमें मौर्य प्रशासनिक व्यवस्था की विस्तृत जानकारी मिलती है। केन्द्रीकृत प्रशासनिक व्यवस्था का मौर्य साम्राज्य की स्थापना के साथ आविर्भाव हुआ। अशोक के अभिलेखों से साम्राज्य के पाँच प्रान्तों में विभक्त होने का संकेत मिलता है एवं केन्द्रीय प्रशासन का प्रान्तों पर नियंत्रण होने का उल्लेख पाया जाता है। अर्थशास्त्र में लिच्छवि, वज्जि, मल्लन, कुरु, पांचाल को संघ गणराज्यों में सम्मिलित किया है। यद्यपि इन्हें राजनैतिक विशेषाधिकार दिये गये थे तथापि इनको साम्राज्य का एक अभिन्न अंग माना जाता था। सम्राट् के लिए विशाल साम्राज्य पर सीधा नियन्त्रण रखा जाना संभव नहीं था। अत: मौर्य साम्राज्य को पाँच प्रान्तों में विभक्त किया गया।

पाँच चक्र

यद्यपि सम्पूर्ण मौर्य-साम्राज्य की राजधानी पाटलिपुत्र थी, पर वहाँ से कम्बोज, बंग और आध्र तक विस्तृत साम्राज्य का शासन सुचारू रूप से नहीं किया जा सकता था। अत: शासन की दृष्टि से मौर्यों के अधीन सम्पूर्ण

विजित को पाँच भागों में बाँटा गया था, जिनकी राजधानियाँ क्रमश: पाटलिपुत्र, तोसाली, उज्जैयनी, तक्षशिला और सुवर्णगिरि थीं। इन राजधानियों को दृष्टि में रखकर हम यह सहज में अनुमान कर सकते हैं कि विशाल मौर्य साम्राज्य पाँच चक्रों में विभक्त था। ये चक्र (प्रांत या सूबे) निम्नलिखित थे-

1 **उत्तरापथ-** जिसमें कम्बोज, गांधार, कश्मीर, अफगानिस्तान, पंजाब आदि के प्रदेश थे। इसकी राजधानी तक्षशिला थी।

2 **पश्चिम चक्र-** इसमें काठियावाड़-गुजरात से लेकर राजपूताना, मालवा आदि के सब प्रदेश शामिल थे। इसकी राजधानी उज्जैयनी थी।

3 **दक्षिणा-पथ-** विंध्याचल के दक्षिण का सारा प्रदेश इस चक्र में था, और इसकी राजधानी सुवर्णगिरि थी।

4 **कलिंग-** अशोक ने अपने नये जीते हुए प्रदेश का एक ओप्रिथक चक्र बनाया था, जिसकी राजधानी तोसाली थी।

5 **मध्य देश-** इसमें वर्तमान बिहार, उत्तर प्रदेश और बंगाल सम्मिलित थे। इसकी राजधानी पाटलिपुत्र थी। इस पंचों चक्रों का शासन करने के लिए प्रायः राजकुल के व्यक्तियों को नियत किया जाता था जिन्हें कुमार कहते था। कुमार अनेक महामत्यों की सहायता से अपने-अपने चक्र का शासन करते थे। अशोक और कुणाल राजा बनने से पूर्व उज्जैयनी, तक्षशिला आदि के कुमार रह चुके थे।

चक्रों के उपविभाग

इन पाँच चक्रों के अन्तर्गत फिर अनेक छोटे शासन-केन्द्र या मण्डल भी थे, जिसमें कुमार के अधीन महामात्य शासन करते थे। उदाहरण के लिए तोसाली के अधीन समापा में, पाटलिपुत्र के अधीन कौशाम्बी में और सुवर्णगिरि के अधीन इसिला में महामात्य रहते थे। उज्जैयनी के अधीन सुराष्ट्र पृथक् देश था, जिसका शासक चन्द्रगुप्त के समय में वैश्य पुष्यगुप्त समय में वहाँ का शासन यवन तुषास्प के अधीन था। मगध सम्राट् की ओर से जो आज्ञाएँ प्रचारित की जाती थीं, वे चक्रों के कुमारों के के नाम अशोक ने जो आदेश भेजे, वे सुवर्णगिरि के कुमार या आर्यपुत्र के द्वारा भेजे। इसी प्रकार कलिंग में समापा के महामात्यों को तोसाली के कुमार की नियुक्ति नहीं होती थी, उसका शासन सीधा सम्राट् के अधीन था। अत: उसके अन्तर्गत कौशाम्बी के महामात्यों को अशोक ने सीधे ही अपने आदेश दिये थे। प्रांतीय शासक कुमार या आर्यपुत्र की सहायता के लिए प्रांतीय मंत्रीपरिषद् होता था। दिव्यावदान में इस बात का उल्लेख है कि प्रांतीय परिषद् का सम्राट से सीधे संपर्क होता था। इसके माध्यम से सम्राट प्रन्तित शासकों की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश लगाता था। वस्तुतः पूरा मौर्य प्रशासन रोक और संतुलन की अवधारणा पर आधारित था। चक्रों के शासन के लिए कुमार की सहायतार्थ जो महामात्य नियुक्त होते थे, उन्हें शासन-सम्बन्धी बहुत अधिकार प्राप्त थे। अतएव अशोक ने चक्रों के शासकों के नाम जो आज्ञाएँ प्रकाशित कीं, उन्हें केवल कुमार या आर्यपुत्र के नाम से नहीं भेजा गया, अपितु कुमार और महामात्य-दोनों के नाम प्रेषित किया गया। इसी प्रकार जब कुमार भी अपने अधीनस्थ

महामात्यों को कोई आज्ञा भेजते थे, तो उन्हें वे अपने नाम से नहीं, अपितु महामात्य-सहित कुमार के नाम से भेजते थे।

जनपद और ग्राम

मौर्य-साम्राज्य के मुख्य पाँच चक्र या विभाग थे और चक्र अनेक मण्डलों में विभक्त थे। प्रत्येक मण्डल में बहुत-से जनपद सम्भवत:, ये जनपद प्राचीन युग के जनपदों के प्रतिनिधि थे। शासन की दृष्टि से जनपदों के भी विविध विभाग होते थे, जिन्हें कौटिल्यीय अर्थशास्त्र में स्थानीय, द्रोण मुख, खार्वटिक, संग्रहण और ग्राम कहा गया है। शासन की ग्राम थी। दस ग्रामों के समूह को संग्रहण कहते थे। बीस संग्रहुणों (या 200 ग्रामों) से एक खार्वटिक बनता था। दो खार्वटिकों (या 400 ग्रामों में से एक द्रोणमुख और खार्वटिक शासन की दृष्टि से एक ही विभाग को सूचित करते हैं। स्थानीय में लगभग 800 ग्राम हुआ करते थे। पर कुछ स्थानीय आकार में छोटे होते थे या कुछ प्रदेशों में आबादी घनी के कारण स्थानीय में गाँवों की संख्या कम रहती थी। ऐसे ही स्थानीयों को द्रोणमुख या खार्वटिक कहा जाता था। ग्राम का शासक ग्रमिक, संग्रहण का गोप और स्थानीय का स्थानिक कहलाता था। सम्पूर्ण जनपद के शासक को समाहर्त्ता कहते थे। समाहर्ता के ऊपर महामात्य होते थे, जो चक्रों के अन्तर्गत विविध मण्डलों का शासन करने के लिए केन्द्रीय सरकार की ओर से नियुक्त किये जाते थे। इन मण्डल-महामात्यों के ऊपर कुमार और उसके सहायक महामात्य रहते थे। सबसे ऊपर पाटलिपुत्र का मौर्य-सम्राट् था।

शासक-वर्ग

शासनकार्य में सम्राट् की सहायता करने के लिए एक मंत्रि-परिषद् होती थी। कौटिल्य अर्थशास्त्र में इस मन्त्रिपरिषद् का विस्तार से वर्णन किया गया है। अशोक के शिलालेखों में भी उसकी परिषद् का बार-बार उल्लेख है। चक्रों के शासक कुमार भी जिन महामात्यों की सहायता से शासनकार्य करते थे, उनकी भी एक परिषद् होती थी। केन्द्रीय सरकार की ओर से जो राज-कर्मचारी साम्राज्य में शासन के विविध पदों पर नियुक्त थे, उन्हें पुरुष कहते थे। ये पुरुष उत्तम, मध्यम और हीन-दीन दर्जों के होते थे। जनपदों के समूहों (मण्डलों) के ऊपर शासन करने वाले महामात्यों की संज्ञा सम्भवत: प्रादेशिक या प्रदेष्टा थी। उनके अधीन जनपदों के शासक समाहर्ता कहलाते थे। नि:सन्देह, ये उत्तम पुरुष होते थे। इनके अधीन युक्त आदि विविध कर्मचारी मध्यम व हीन दर्जों में रखे जाते थे।

स्थानीय स्वशासन

जनपदों के शासन का संचालन करने के लिए जहाँ केन्द्रीय सरकार की ओर से समाहर्त्ता नियत थे, वहाँ जनपदों की अपनी आन्तरिक स्वतन्त्रता भी अक्षुण्ण रूप से कायम थी। कौटिल्य अर्थशास्त्र में बार-बार इस बात पर जोर दिया गया है कि जनपदों, नगरों व ग्रामों के धर्म, चरित्र और व्यवहार को अक्षुण्ण रखा जाय। इसका अभिप्राय यह हुआ, कि इसमें अपना स्थानीय स्वशासन पुरानी परम्परा के अनुसार जारी था। सब जनपदों में एक ही प्रकार की स्थानीय स्वतन्त्रता नहीं थी। हम जानते हैं, कि मगध-साम्राज्य के विकास से पूर्व कुछ जनपदों में गणशासन और कुछ में राजाओं का शासन था। उनके व्यवहार और धर्म अलग-अलग थे। जब वे मगध के साम्राज्यवाद के अधीन हो गये, तो भी उनमें अपनी पुरानी परम्परा के अनुसार स्थानीय

शासन जारी रहा, और ग्रामों में पुरानी ग्रामसभाओं और नगरों में नगरसभाओं (पौरसभा) के अधिकार कायम रहे। ग्रामों के समूहों या जनपदों में भी जनपदसभा की सत्ता विद्यमान रही। पर साथ ही केन्द्रीय सरकार की ओर से भी विविध करों को एकत्र करने तथा शासन का संचालन करने के लिए पुरुष नियुक्त किये जाते रहे।

जनता का शासन

यदि मगध-साम्राज्य के शासन में कूटस्थानीय राजा का इतना महत्त्वपूर्ण स्थान था, और उसकी मन्त्रिपरिषद् उसकी अपनी नियत की हुई सभा होती थी तो क्या मगध-राजाओं का शासन सर्वथा निरंकुश और स्वेच्छाचारी था ? क्या उस समय की जनता शासन में जरा भी हाथ नहीं रखती थी? यह ठीक है, कि अपने बाहुबल और सैन्य-शक्ति से विशाल साम्राज्य का निर्माण करने वाले मगध-सम्राटों पर अंकुश रखने वाली कोई अन्य सर्वोच्च सत्ता नहीं थी, और यह कि राजा ठीक प्रकार से प्रजा का पालन करें, इस बात की प्रेरणा प्रदान करने वाली शक्ति उनकी अपनी योग्यता, अपनी महानुभवता और अपनी सर्वगुणसम्पन्नता के अतिरिक्त और कोई नहीं थी, पर मगध-साम्राज्य के शासन में जनता का बहुत बड़ा हाथ था। मगध-साम्राज्य ने जिन विविध जनपदों को अपने अधीन किया था, उनके व्यवहार, धर्म और चरित्र अभी अक्षुण्ण थे। वे अपना शासन बहुत कुछ स्वयं ही करते थे। उस युग के शिल्पी और व्यवसायी जिन श्रेणियों में संगठित थे, वे अपना शासन स्वयं करती थीं। नगरों की पौरसभाएँ, व्यापारियों के पूरा और निगम तथा ग्रामों की ग्रामसभाएँ अपने आन्तरिक मामलों में अब भी पूर्ण स्वतन्त्र थी। राजा लोग देश के प्राचीन परम्परागत राजधर्म का पालन करते थे, और अपने व्यवहार का निर्धारण उसी के अनुसार करते थे। यह धर्म और व्यवहार सनातन थे, राजा की स्वेच्छा पर निर्भर नहीं थे। इन्हीं सबका परिणाम था, कि पाटलिपुत्र में विजिगीषु राजर्षि राजाओं के रहते हुए भी जनता अपना शासन अपने आप किया करती थी।

जनपदों का शासन

मगध के साम्राज्यवाद ने धीरे-धीरे भारत के सभी पुराने जनपदों को अपने अधीन कर लिया था। परन्तु इन जनपदों की अपनी भाषाएँ होती थीं। जनपद की राजधानी या पुर की सभा को पौर और शेष प्रदेश की सीमा को जनपद कहा जाता था। प्रत्येक जनपद के अपने धर्म, व्यवहार और चरित्र भी होते थे। मगध के सम्राटों ने इन विविध जनपदों को जीतकर इनकी आन्तरिक स्वतन्त्रता को कायम रखा। कौटलीय अर्थशास्त्र में एक प्रकरण है, जिसका शीर्षक लब्धप्रशमनम् है। इसमें यह निरूपित किया गया है कि नये जीते हुए प्रदेश के साथ क्या व्यवहार किया जाय और उसमें किस प्रकार शान्ति स्थापित की जाय। इसके अनुसार नये जीते हुए प्रदेश में राजा को चाहिए कि वह अपने को जनता का प्रिय बनाने का प्रयत्न करे। जनता के विरुद्ध आचरण करने वाले का विश्वास नहीं जम सकता, अत: राजा जनता के समान ही अपना विहारों का आदर करे, और वहाँ के धर्म, व्यवहार आदि का उल्लंघन न करे।

ग्रामों का शासन

UGC APPROVED JOURNAL - 47746
© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 03 , Issue : 10 | October – December 2017

जनपदों में बहुत-से ग्राम सम्मिलित होते थे, और प्रत्येक ग्राम शासन की दृष्टि से अपनी पृथक व स्वतन्त्र सत्ता रखता था। प्रत्येक ग्राम का शासक पृथक्-पृथक् होता था, जिसे ग्रामिक कहते थे। ग्रामिक ग्राम के अन्य निवासियों के साथ मिलकर अपराधियों को दण्ड देता था, और किसी व्यक्ति को ग्राम से बहिष्कृत भी कर सकता था। ग्राम की अपनी सार्वजनिक निधि होती थी, जो जुरमाने ग्रामिक द्वारा वसूल किए जाते थे, वे इसी निधि में जमा होते थे। ग्राम की ओर से सार्वजनिक हित के अनेक कार्यों की व्यवस्था की जाती थी। लोगों के मनोरंजन के लिए विविध तमाशों (प्रेक्षाओं) की व्यवस्था की जाती थी, जिनमें सब ग्रामवासियों को भाग लेना होता था। जो लोग अपने सार्वजनिक कर्तव्य की उपेक्षा करते थे, उन पर जुरमाना किया जाता था। इससे यह सूचित होता है कि ग्राम का अपना एक पृथक् संगठन भी उस युग में विद्यमान था। यह ग्रामसंस्था न्याय का भी कार्य करती थी। ग्रामसभाओं से बनाये गए नियम साम्राज्य के न्यायालयों में मान्य होते थे। अक्षपटल के अध्यक्ष के कार्यों में एक यह भी था, कि वह ग्रामसंघ के धर्म, व्यवहार, चरित्र, संस्थान आदि को पंजीकृत करें।

उपसंहार

मौर्य प्रशासन में स्थानीय स्तर के उन अधिकारियों की भूमिका महत्वपूर्ण थी जो केन्द्रीय प्रशासन और स्थानीय प्रशासन के बीच की कड़ी का काम करता थे। पुलिसानी युक्त की तरह का निम्न अधिकारी होता था तथा वह जनमत की सूचना राजा को देता था। छठे वृहत शिलालेख में प्रतिवेदिका का उल्लेख मिलता है जो कानून-व्यवस्था से संबंधित विशेष रिपोर्टर होता था। अर्थशास्त्र में प्रतिवेदिका की तुलना चर्चित गुप्तचरों से की गई है तथा इन्हें इस बात की छूट होती थी कि ये बेधड़क राजा से कहीं भी मिल सकते थे। एक अन्य कनिष्ठ अधिकारी होता था जो राजा के फरमानों को जनता के समक्ष पढ़ता था। इसी प्रकार आयुक्तिक राजा द्वारा नियुक्त विशिष्ट अधिकारी था और इसका काम महामायों की सहायता करना था।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

[1] डॉ० हरिनारायण दूबे, भारत की प्रारम्भिक संस्कतियां एवं राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली-1990।

[2] कृष्ण मूर्ति गुप्ता, गंगा (एक प्राकृतिक सांस्कृतिक धरोहर), 38. वही,पृष्ठ-186।

[3] डॉ० भिक्षु धर्म रक्षित ,धम्म पद, मोतीलाल बनारसीदास वाराणसी, पंचम पुर्नमुद्रण-2007। पृष्ठ-116।

[4] के०टी०एस० सराओ, प्राचीन भारतीय बौद्ध धर्म : उद्भव, प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार-2007।पृष्ठ-10।

[5] वाचस्पति गैरोला, कौटिलीय अर्थशास्त्रमू, चौखम्भा विद्यामवन . 49. राधा कुमुद मुखर्जी, चन्द्रगुप्त मौर्य और उसका काल, राज वाराणसी-2003 | 2/18 / 4 पृष्ठ-82 | कमल प्रकाशन नई दिल्ली-1990।

[6] दिनेश चन्द्र, प्राचीन भारतीय अभिलेख : ऐतिहासिक एवं. 51. वही।

UGC APPROVED JOURNAL - 47746
© INNOVATIVE RESEARCH THOUGHTS | Refereed | Peer Reviewed | Indexed
ISSN : 2454 – 308X | Volume : 03 , Issue : 10 | October – December 2017

[7] दिनेश चन्द्र, प्राचीन भारतीय अभिलेख : ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय भारत सरकार-2007।
[8] सत्यकेतु विद्यालंकार, मौर्य साम्राज्य का इतिहास, श्री सरस्वती सदन नई दिल्ली-2005। पृष्ठ-139